श्रीराम-कथा-संख्या—१४

लङ्का-दहन



लेखक—

नेपाल के श्री ३ सर्कार से 'कथावाचस्पति' की पदवीप्राप्त—
कीर्तनकलानिधि, काव्यकलाभूषण, श्रीहरिकथाविशारद, कविरत्न,

राधेश्याम कथावाचक

प्रकाशक—श्रीराधेश्याम पुस्तकालय, बरेली



 श्रीराम-कथा 

संख्या — १४

सर्वाधिकार प्रकाशक के आधीन हैं।

(सुन्दर-काण्ड)



लङ्का-दहन

लेखक—

नेपाल की श्री ३ सर्कार से "कथावाचस्पति" की पदवीप्राप्त—

कीर्तनकलानिधि, काव्यकलाभूषण, श्रीहरिकथाविशारद, कविरत्न—

प० राधेश्याम कथावाचक

प्रकाशक—



अट्ठावनवीं बार २०००] सन् १९६३ ई० [मूल्य 

मुद्रक—प० रामनारायण पाठक, श्रीराधेश्याम प्रेस, बरेली

ॐ



प्रार्थना

नाथ, अब तो निभाए बनेगी, बिगड़ी मेरी बनाए बनेगी ।

चिन्ता से सभी अंग हैं मुर्झाए कमल से ।
वह शोक ने घेरा है कि कल है नहीं कल से ॥
यह आगई है ग्रहदशा किस कर्म के फल से ?
गुरुदेव, उबारो मुझे निज पुण्य के बल से ॥
दुःख मेरा मिटाए बनेगी ॥ नाथ० ॥ १ ॥

धन्वन्तरी बन चूर्ण कोई शीघ्र खिलाओ ।
अथवा सुषेण होके सँजीवन ही पिलाओ ॥
या जो उचित प्रयत्न हो, वह काम में लाओ ।
गुण गायगा कृपालु के. मरते को जिलाओ ॥
अब न चण भर रुलाए बनेगी ॥ नाथ० ॥ २ ॥

दासों को बड़ा कष्ट यह अन्धेर नहीं है ?
या आप तलक पहुँचती टेर नहीं है ।
गिरता है वज्र भाग्य का कुछ फेर नहीं है ?
पृथ्वी पै प्रलय हो रही है, देर नहीं है ॥
अब तुम्हीं को सुनाए बनेगी ॥ नाथ० ॥ ३ ॥

सङ्कट उसी पै आए जिसका शुद्ध हृदय हो ।
न्यायेश, करो न्याय, तो अन्याय का क्षय हो ॥
जो ले चुका चरण की शरण क्यों उसे भय हो ?
स्वीकार 'राधेश्याम' की यह आर्त विनय हो ॥
कष्ट मेरा हटाए बनेगी ॥ नाथ० ॥ ४ ॥

—:०:—

ॐ

कथा प्रारम्भ

सीताजी से जब मिला हार्दिक आशीर्वाद ।
हनुमत् ने समझा उसे—जीवन-लाभ-प्रसाद ॥

श्रीजी के वाक्य नहीं थे वे—अनमोल रत्न थे चुने हुए ।
मन-मानस में ले—कपि उनको—साहस-धन से सौगुने हुए ॥
फिर ऐसे भाव-निमग्न हुए अपना अस्तित्व भुला उट्ठे ।
पा प्रबल शक्ति झूमने लगे, पा विमल भक्ति पुलका उट्ठे ॥

कितने ही क्षण मौन रह, फिर बोले साह्लाद—
"जन्म सफल मेरा हुआ—पाकर आशीर्वाद ॥

हे माता, अब है विनय एक-यद्यपि कुछ हृदय हिचकता है ।
फिर भी मुख खोल कहे माँ से-बालक का हृदय मचलता है ॥
आया हूँ सिन्धु लाँघकर मैं, इस कारण भूख सताती है—
यह पेड़ फलों से लदे देख, इच्छा भी बढ़ती जाती है ॥
रखवाली पर जो माली हैं, उनका किञ्चित् भय नहीं मुझे ।
जब कृपा-दृष्टि माँ की है तो सकुचाहट संशय नहीं मुझे ॥"

देख बुद्धि बल-धाम सुत बोलीं माँ तत्काल ।
"रघुराई को हृदय धर—जाओ मेरे लाल ॥

गाना

"कपि जाओ, फल खाओ ।
निर्भय हो लौट यहीं आओ ॥
तेरी सब भाँति कुशल हो, मेरा बरदान अटल हो ।
मिले जो फल वह सुफल हो, हाँ मन में हर्ष लाओ ॥
मेरी आशिष है तेरा बाल भी न बाँका हो ।
यह भी अभिलाष है—आतिथ्य तेरे मन का हो ॥
जाओ फल खाउ, विफल विघ्न, सफल इच्छा हो ।
शूल हों फूल तुझे, शैल तुझे तिनका हो ॥
आग पानी हो तुझे, काल तेरा कौरा हो ।
जय 'राधेश्याम' पाओ ॥"

—: :—

शीश नवाकर मात को पदरज लेकर माथ ।
अवधनाथ का ध्यान धर चले मुदित कपिनाथ ॥
जिस डाली पर डाली आँखें, वह डाली डाली फिर न रही ।
फल फूल तोड़ सब फेंक दिए—लाली हरियाली फिर न रही ॥
हर्षित हो-हो किलकार मार तरु-तरु पर धाने लगे बली ।
मीठे-मीठे फल छाँट छाँट, जी भर-भर खाने लगे बली ॥
फल खाकर तरु उखाड़ते थे, सागर में उन्हें बहाते थे ।
मालीगण सम्मुख आते तो शाखायें मार भगाते थे ॥
रखवाले बजरङ्ग की बार बार खा मार ।
पहुँचे दशानन—सभा में करने लगे पुकार ॥
"स्वामी, आया है कीश एक, वाटिका उजाड़ रहा है वह ।
फल खाने की कुछ बात नहीं; पर पेड़ उखाड़ रहा है वह ॥
वानर है नहीं, प्रलय है वह, या यमपुर का हलकारा है ।
विरमा है सारा अशोक; राक्षसगण को बस मारा है ॥"

उन सबकी यह टेर सुन, कोप उठा दशभाल ।
'जाउ भगादो कीश को'—भेजे भट तत्काल ॥
खलदल आता देखकर उछल पड़े हनुमान ।
वृक्ष हिलाकर वेग से गर्जे मेघ-समान ॥

सुनते ही शब्द असुर काँपे फट गए युगलपट कर्णों के ।
बजरंग ने रंग वह दिखलाए भदरँग मुँह हुए राक्षसों के ॥
कुछ मींज दिए, कुछ खूँद दिए कुछ पेड़ गिराकर दबा दिए ।
कुछ पकड़ सिन्धु में फेंक दिए, कुछ बाँध पूँछ में घुमा दिए ॥
बजरङ्गी ने रणरङ्गी ने क्षण में रिपु यमपुर पहुँचाए ।
कुछ बचे खुचे, अधमरे असुर फिर राजसभा में चिल्लाए ॥

रावण अति क्रोधित हुआ सुन दूसरी पुकार ।
उसी समय सेना—सहित-भेजा अक्षकुमार ॥
इधर बली बजरङ्ग ने—उड़ती देखी धूर ।
समझ लिया आरहा है अबके कोई शूर ॥

इस बार किया ऐसा गर्जन, काँपा पत्ता-पत्ता बन का ।
मारा उखाड़कर वृक्ष एक, मुँह फेर दिया खलनन्दन का ॥
झट तरु से कूद, पकड़ गर्दन-झटका दे घोष किया जय का ।
छाती पर एक लात मारी—फट गया कलेजा अक्षय का ॥
बजरङ्ग सिंह की मूर्ति देख, बकरी-सा वह मिमिया उट्ठा ।
क्षय हुआ एक क्षण में अक्षय सिर महाकाल मँडरा उट्ठा ॥
तब धाए खलदल पर कपिवर ज्वालामुख आग बबूले से ।
रिपु लगे बिलाने क्रम-क्रम से पानी के निर्बल बगूले से ॥
चुटकी में चुटपुट शत्रु हुए वह महाप्रलय दिखलाई दी ।
कुछ बचे खुचे फिर भाग चले जाकर इस भाँति दुहाई दी ॥

❀ गाना ❀

"आई शीश पै लड़ाई ! है दुहाई ! है दुहाई !
राजबाड़ी बाग़बाड़ी, बानरे ने लूट खाई !
झाड़ के उजाड़ के बिगाड़के, उखाड़के—
सारी अशोकबाटिका का कर दिया है ढेर ॥
अक्षयकुमार मारा है, अन्धेर है अन्धेर !
राजदण्ड हो प्रचण्ड, अन्यथा नहीं भलाई ॥"

—:०:-

रावण ने यह टेर जब सुनी तीसरी बार ।
अक्षयसुत की मृत्यु सुन बोला तनिक विचार ॥
"इन्द्रजीत, अब जाउ तुम वानर है बलवन्त ।
वध मत करना बाँधकर लाना यहाँ तुरन्त ॥
देखूँ तो मैं कौन है ऐसा बल-भण्डार—
जिसने मेरे अक्ष को रण में दिया सँहार ॥"
मेघनाद पहुँचा जभी हँसे पवन के लाल ।
ताड़ लिया इस बार है योद्धा एक विशाल ॥
फिर गर्ज तर्ज तरुवर उखाड़, सीधा प्रहार भरपूर किया ।
रथवान् सहित घोड़े मारे रथ को भी चकनाचूर किया ॥
सारा दल अङ्गरक्षकों का संहार दिया बजरंगी ने ।
फिर इन्द्रजीत के निकट पहुँच-जयनाद किया रणरंगी ने ॥
हलका सा मुष्टिक कर प्रहार किलकार उठे तरु पर जाकर ।
उस इन्द्रजीत से योद्धा को मूर्च्छा आई मुक्का खाकर ॥
मूर्च्छा से जग मायावी ने दिखलाया मायाबल सारा ।
बजरङ्गबली से वश न चला, मिल गया धूलि में छल सारा ॥
उछल रहे थे वृक्ष पे पवनपुत्र साह्लाद ।
भू पर से कहने लगा झुँझलाकर घननाद ॥

"डाली डाली उछलकर, दिखलाता है चाल ।
बन्दी करता हूँ अभी, अपने लिए सँभाल ॥

मैं मेघनाद कहलाता हूँ, वैरी को सदा हराया है ।
जीता है मैंने स्वर्गलोक, पद इन्द्रजीत का पाया है ॥
पर तू भयभीत न हो मन में बल नहीं तुझे दिखलाऊँगा ।
श्रीमान् पिताजी के सम्मुख केवल तुझको ले जाऊँगा ॥"

हनुमत् बोले—"युद्ध कर बातों का क्या काज ?
इन्द्रजालिए, खेल ले इन्द्रजाल सब आज ॥

यदि तुझको कुछ बन पड़े नहीं; तो अभी पिता को बुलवाले !
क्यों खड़ा हुआ मुँह तकता है ? अपने सब कर्तब दिखलाले ॥
तेरा-मेरा रण ही क्या है ? मैं तुझको खेल खिलाता हूँ ।
तू मेघनाद कहलाता है, मैं रामदास कहलाता हूँ ॥
तू इन्द्रजीत छलवाला है, मैं कामजीत बलवाला हूँ ।
तू दीपक है मैं हूँ मशाल रविकुल-रवि का उजियाला हूँ ॥"

बिगड़ उठा यह बात सुन; लङ्काधीशकुमार ।
ब्रह्म-अस्त्र लेकर कहा—"अच्छा रोक प्रहार ॥

मुझको तो तुझे बाँधना है, अतएव बाँध ले जाऊँगा ।
सौ दोसौ नहीं सहस्रों ही कर्तब अपने दिखलाऊँगा ॥"
तू निश्चय ही है महावीर, तेरा वीरत्व मानता हूँ ।
ले फेंक रहा हूँ ब्रह्मफाँस, इसमें अब तुझे बाँधता हूँ ॥"

कहा अञ्जनीलाल ने-"पूर्ण हुआ संग्राम ?
बन्धन है यह धर्म का बल का अब क्या काम ?

यह ब्रह्म-अस्त्र, यह ब्रह्मफाँस, यह ब्रह्मज्ञान ब्रह्मा का है ?
मैं इसे काट सकता हूँ पर सम्मान, ध्यान ब्रह्मा का है ॥

जिन रामचन्द्र जगदीश्वर को सुर, नर, मुनि निशदिन रटते हैं।
जिनका लेते ही नाम तुरत सारे भवबन्धन कटते हैं ॥
उनके जन को यह बन्धन क्या ? पर प्रश्न धर्म का है इसमें ।
अतएव नाथ के कार्य हेतु - यह अनुचर बँधता है इसमें ॥"
इतना कहकर बँध गए स्वयं, वृक्षों के डाले छोड़ दिए ।
बँधते-बँधते भी कपिवर ने बीसों के मस्तक तोड़ दिए ॥

लंकेश्वर की सभा में पहुंचे जभी कपीश ।
क्रोधित होकर उसी क्षण बोल उठा दशशीस ॥

"तू कौन ? कहाँ से आया है ? कुछ अपनी बात बता बनरे ।
उद्यान उजाड़ा क्यों मेरा ? क्या कारण था ? बतला बनरे ॥
लंका के राजा का तूने क्या नाम कान से सुना नहीं ?
तू इतना ढीठ निरंकुश है-मेरे प्रताप से डरा नहीं ॥
मारा है अक्षकुँवर मेरा तो तेरा क्यों न सँहार करूँ ?
तू ही न्यायी बनकर कहदे, तुझसे कैसा व्यवहार करूँ ?"

ब्रह्मफाँस से मुक्त हो; बोले कपि सविवेक—
"उत्तर कैसे एक दूँ जब हैं प्रश्न अनेक ?

दशमुख की प्रश्न-पुस्तिका के पन्ने क्रम-क्रम से लेता हूँ ।
पहले-जो पूछा सर्वप्रथम उसका ही उत्तर देता हूँ ॥
सच्चिदानन्द सर्वदानन्द बल-बुद्धि ज्ञान-सागर हैं जो ।
रघुवंशशिरोमणि राघवेन्द्र, रघुकुलनायक रघुवर हैं जो ॥
जो उत्पत्ति-स्थिति-प्रलयरूप, पालक-पोषक संहारक हैं ।
इच्छा पर जिनकी विधि, हरि, हर संसारकार्य-परिचालक हैं ॥
जो दशरथ-अजिरबिहारी हैं, कहलाते रघुकुलभूषण हैं ।
रीझी थीं जिनपर शूर्पणखा, हारे जिनसे खरदूषण हैं ॥

फिर और ध्यान दे लो, जिनकी सीता को हरकर लाए हो ।
मैं उन्हीं राम का सेवक हूं तुम जिनसे वैर बढ़ाए हो ॥
अब सुनिए, लङ्का आया था माता का पता लगाने को ।
इतने में भूख लगी ऐसी होगया विवश फल खाने को ॥
सुधि तुमने न ली पाहुने की, निश्चरकुल में अभाव है यह ।
फल खाकर पेड़ तोड़ता है, वानर का तो स्वभाव है यह ॥
भगवान् जीम लेते हैं जब-तब भक्त प्रसादी पाते हैं ।
इस कारण भोजन से पहले—निज प्रभु को भोग लगाते हैं ॥
मैंने भी श्रीरामार्पण कर उन वृक्षों के फल खाए हैं ।
तुम उस प्रसाद के पात्र न थे इस कारण तोड़ बहाए हैं ॥
अक्षयवध का उत्तर यह है-सबको अपना तन प्यारा है ।
उसने जब मुझको मारा तो मैंने भी उसको मारा है ॥

अब मेरी कुछ प्रार्थना सुनिए देकर ध्यान ।
बिना कहे बनती नहीं, कहना पड़ा निदान ॥

सीता माँ को लङ्का में रख तुम भारी भूल कर रहे हो ।
जीवन में अपयश अर्जन कर बिन आई मृत्यु मर रहे हो ॥
सब पीछे से पछताते हैं-जो हैं मदान्ध प्रभुतावाले ।
सन्निकट आरहा प्रलयकाल सोते हैं क्यों लङ्कावाले ?
है यही उचित-शत्रुता छोड़ लौटाओ सीता माता को ।
श्रीकोशलेन्द्र की छाया में फैलाओ राजप्रतिष्ठा को ॥"

रावण बोला-"व्यर्थ का यह वितान मत तान ।
चोर और बरजोर हो करता नीति बखान ॥

है धाक धरनि से गगन तलक रचना समस्त मुझ ही में है ।
आज्ञाकारी हैं सूर्य-चन्द्र सब उदय-अस्त मुझ ही में है ॥

मेरी त्योरी के चढ़ते ही त्रैलोक्य नाचने लगते हैं ।
ग्रह, काल, सुरेश, कुबेर, वरुण मेरे घर पानी भरते हैं ॥
आती है बड़ी हँसी मुझको यह ऊटपटाँग बात सुनकर ।
उस अधम तपस्वी बच्चे को किस भाँति बखाना चुन चुनकर ॥
नासमझे, किस घमंड में है ? स्वामी को अपने समझ ले ।
उस वानरवाले तपसी से—क्या डर जाएँ लङ्कावाले ?"

हुए अञ्जनीलाल के लाल तुरत ही नैन ।
भाव दबाकर क्रोध का बोले ऐसे वैन ॥

"तूने जो 'अधम' कहा, इससे कब उनकी महिमा घटती है ?
कितनी ही फेंको धूल किन्तु सूरज तक नहीं पहुँचती है ॥
आगया मृत्यु का दिन समीप, उसने ही तुझे घुमाया है ।
कहना सुनना है व्यर्थ सभी, तू तो सचमुच बौराया है ॥
मेरा मेरा जो बकता है, यह कुछ भी काम न आएगा ।
तब मुट्ठी बाँधे आया था, अब हाथ पसारे जाएगा ॥
श्रीरामचन्द्र का दास बना तो देववधूटी निरखेंगी ।
अन्यथा, मरेगा जब मदान्ध—मक्खियाँ लाश पर भिनकेंगी ॥

❀ गाना ❀

अरे दशकन्धर, तज अभिमान ।
भाई, बन्धु, कुटुम्ब, कबीला, मित्र, त्रिया, सन्तान ।
काम नहीं आएगा कोई जब हों प्राण पयान ॥
सेना, सम्पति, राज, अटारी, घोड़े, गज, रथ, यान ।
एक दिवस सब छुट जाएँगे, तू है और मसान ॥
और वस्तुओं की क्या कहिए हैं वे दूर महान ।
साथ न जाए यह शरीर भी जिसपर बड़ा गुमान ॥
खान, पान निद्रा, माया में भूला क्यों अज्ञान !
अब तो निज कर्तव्य समझले चाहे जो उत्थान ॥
पुण्य पाप ही सँग जाता है रख तू इतना ध्यान ।
'राधेश्याम' समझ ले जग में है बस कर्म प्रधान ।

दशकन्धर को विष लगा—यह हितकर उपदेश ।
क्रोधयुक्त होकर दिया इस प्रकार आदेश ॥

"हे राजसभा के सचिववरो, वनरा सचमुच उन्मादी है ।
सीधा-सादा सा लगता है, वास्तव में बड़ा विवादी है ॥
निश्चय ही बल पर फूला है उन दोनों तपसी बच्चों के ।
सिर इसका अभी काट डालो सामने मेरी इन आँखों के ॥"
खड्गों को खींच उठे खलगण, चाहा कपि का संहार करें ।
भालों की नोकों पे रखलें, फिर बाणों की बौछार करें ॥

दैवयोग से आगए तुरत विभीषणराय ।
बोल उठे-"होरहा है—यह कैसा अन्याय ?

हे भाई ! कुछ सोचो समझो, सर्वत्र क्षमा है दूतों को ।
ऐसा न करो जग धिक्कारे-लङ्कापति की कर्तूतों को ॥
फिर राजसभा है यह राजन्, अन्याय न यहां कीजिएगा ।
देना ही है यदि दण्ड इसे तो अवसर देख दीजिएगा ॥"

अब तो सब कहने लगे—"यही, यही है न्याय ।"
बोल उठा रावण—"करो तो फिर अन्य उपाय ॥

बेपूछे पूँछ घुमा कपि ने उद्यान उजाड़ा सारा है ।
अतएव निपूँछा करो इसे, अब यह आदेश हमारा है ॥
घी और तेल से वस्त्र भिगो-बँधवाउ पूँछ में वानर की ।
फिर कर प्रचण्ड प्रज्ज्वलित अग्नि लगवाउ पूँछ में वानर की ॥
जब-जली पूँछ से जाएगा तो स्वामी को भड़काएगा ।
लड़ने के लिए तपसियों को अति शीघ्र यहाँ ले आएगा ॥"

आज्ञा सुन लङ्केश की हँसे बली हनुमान—
"यही पूँछ तुझ दुष्ट का हर लेगी अभिमान ॥

शारद माँ तो कर चुकीं काम अब मैं कुछ दिखलाऊँगा ।
तिगनी का नाच नचा इसको, सब इसकी अकड़ भुलाऊँगा ॥
राजाज्ञा-वश आज्ञाकारी आज्ञा का पालन करते थे ।
घर घर से आ अनेक कपड़े उस एक पूँछ पर बँधते थे ॥
लङ्का में अद्भुत कौतुक था बूढ़े बच्चे सब हँसते थे ।
जब पवनपुत्र अञ्जनीलाल अपनी यह लीला करते थे ॥
वे वस्त्र लगाते जाते थे यह पूँछ बढ़ाते जाते थे ।
पुरभर के कपड़े लगा दिए पर छोर न उसका पाते थे ॥
घी-तैल काम आया इतना बाक़ी न बचा छौंकन तक को ।
कपड़े का ऐसा काल हुआ बच रहा न ज़रा क़फ़न तक को ॥

बच्चे, बूढ़े, तरुण सब बोल विविधविध बोल ।
खिलवाड़ें करने लगे - बजा-बजाकर ढोल ॥
अन्धों को सूझी नहीं सुख में दुख की लाग ?
नगर घुमा कपि पूँछ में तुरत लगादी आग ॥

बूढ़े बूढ़े जो कहते हैं, आती वह बात यहाँ पर है ।
'खाँसी सब रोगों की जड़ है तो हँसी लड़ाई का घर है' ॥
श्रीरामचन्द्र की महिमा को लङ्का के पामर क्या जानें ?
बजरङ्गबली की महिमा को मतवाले निश्चर क्या जानें ?
रजनी के जाते ही जैसे-हो उदित अरुण मार्तण्ड उठे ।
त्यों आग पूँछ में लगते ही हनुमत् हो परम प्रचण्ड उठे ॥

अट्टहास कर दुर्ग पर पहुँचे पवनकुमार ।
पृथ्वी से आकाश तक व्यापा शब्द अपार ॥

लङ्का में बिजली सी चमकी घनसा घनननन घोर हुआ ।
आकार बढ़ा जब आँधी-सा तो 'हा-हा' चारों ओर हुआ ॥

काँपे कच्छप, दहले पन्नग, खिसके दिक्पति वह क्रान्ति हुई ।
महि गगन हिले गिरि धरणि धँसे, अति प्रबल प्रलय सी भ्रान्ति हुई ॥
चल पड़ीं हवाएँ 'उनचास' तरु टूट-टूटकर गिरते थे ।
आकाश-धरातल एक हुआ — अञ्जनीलाल यों बढ़ते थे ॥"

बढ़े हुए आकार में रहे कुछ समय वीर ।
दीर्घ किया फिर पूँछ को लघु कर लिया शरीर ॥

"चढ़कर उन कनक कँगूरों पर कलशों को ढाने लगे बली ।
फिर एक ठौर पर बैठ गए लाँगूल घुमाने लगे बली ॥
हरि के द्रोही निशचरगण को करनी का स्वाद चखाते थे ।
प्रत्येक दिशा में घूम घूम — जलतों को और जलाते थे ॥"

साँय साँय बढ़ने लगा ज्वाला का विस्तार ।
धाँय-धाँय जलने लगा असुरों का घर-द्वार ॥

कोठों में धक धक आग लगी, नर-नारी व्याकुल फिरते थे ।
चेती प्रचण्ड चण्डी ऐसी गृह खण्ड खण्ड हो गिरते थे ॥
जब ऊपर को लपटें उट्ठीं—चलता रथ रुका दिवाकर का ।
सारा त्रिकूट गिरि भवक उठा, जल लगा खौलने सागर का ॥
पति को पत्नी बेटे को माँ, अग्रज को अनुज बुलाते थे ।
लङ्कानगरी के नर-नारी—सब हाहाकार मचाते थे ॥

❀ गाना ❀

"चण्डी जगी ! आगी लगी ! हाय ! हाय !! कैसी हुई !
घर जला ! अटारी जली ! सब जला ! पिटारी जली !!
मार है ! पुकार है ! अपार चीत्कार है !
मारा हमें, लङ्केश का हो जाए सत्यानाश !
बाहर जले भीतर जले ! धरती जले अकाश !!
जानकी न आई, हाय ! जान की घड़ी है आई !"

हाहाकार निहार यह—गरज उठा दशमाथ ।
होंठ काटकर दाँत से मींजे दोनों हाथ ॥
बलवानों को बलहीन समझ—भृकुटी कराल करली अपनी ।
फिर आँख उठाई गगन ओर पुतली विशाल करली अपनी ॥
क्रोधान्वित नेत्र दशानन के जैसे ही ऊपर उठते हैं ।
उडुगण, यम, इन्द्र, कुबेर, वरुण, रवि, शशि के छक्के छुटते हैं॥
वह बिजली थी उन आँखों में अम्बर पर घिर आए बादल ।
कड़कड़ सा भीषण शब्द हुआ जल अँधाधुन्ध लाए बादल ॥
संकेतमात्र से काम हुआ, आयोजन हो तो ऐसा हो ।
यदि शासन हो तो ऐसा हो, अनुशासन हो तो ऐसा हो ॥
दुर्दिन में होता नहीं कोई सिद्ध उपाय ।
देता है प्रतिकूल फल सीधा भी व्यवसाय ॥
ईश्वर की माया अद्भुत है, होनी का खेल निराला है ।
भगवान् राम ही जब रूठे, तब कौन बचानेवाला है ?
जिस समय अग्नि में जल पहुँचा तो फल विपरीत लगा फलने ।
घी का सा काम किया जल ने, वह आग लगी दूनी जलने ॥
मानो आकाशी झरने से पावक की धार झर रही थी ।
या उधर अशोकवाटिका में तप्तात्मा काम कर रही थी ॥
बालों को खोले हुए सिया कहती थी "लज्जा जाय नहीं ।
ज्वाला मैया, मेरे सुत पर देखना आँच कुछ आय नहीं" ॥
यह देख प्रकृति का चमत्कार अंजनीलाल हर्षा उट्ठे ।
हनुमत् को जब हँसते देखा रावण राजा खिसिया उट्ठे ॥
बोले—"क्या जाता रहा—मेरा शासनकाल ?
बन्दीगृह से काल को लाओ अभी निकाल ॥

ओ काल कहाँ तू बैठा है ? कुछ कार्य नहीं कर सकता है ?
लङ्का में आग लग रही है, तू खड़ा खड़ा मुँह तकता है ?
हे विपत्काल अतिकाल न कर आ शीघ्र झपटकर बाहर को।
मैं आज्ञा तुझको देता हूँ भक्षण करले इस वानर को॥"
जिस भाँति मदारी के भय से कपि नाना कर्तब करते हैं।
त्योंही प्रताप से रावण के यम और काल भी डरते हैं॥
अति कुपित देख दशकन्धर को कम्पित सा हो वह काल गया।
फिर प्रलयकाल की भाँति झपट बजरङ्गी पर तत्काल गया॥
कहकर 'जय रघुराज' की बोले अञ्जनिलाल—
"तुझको ही संसार में कहते हैं क्या काल ?
तू लोकजीत, तू भुवनजीत, जगजीत बखाना जाता है।
पर यह शरीर है रामदास जो कालजीत कहलाता है॥
मैं महाकाल हूँ अरे काल तुझ कराल को विकराल हूँ मैं।
जिसके अधीन है शक्ति तेरी, उस महाशक्ति का लाल हूँ मैं॥"
यह कह झट से झपटे पकड़ा—उस क्रूर काल को क्षणभर में।
ज्यों बालकाल में ले छलाँग था धरा दिवाकर को कर में॥
त्रिभुवन में हाहाकार हुआ, हिल गया इन्द्रपुर ब्रह्मासन।
कैलास-शिखर पर डोल गया कैलासनाथ का योगासन॥

❀ गाना ❀

घर, दर, धन, वन, जल, थल में।
खलभल हुई—नभमण्डल में॥
वरुण, कुवेर, धरणि, सुमेर।
कम्पित सब जग थरररररररर॥
हलचल हुई निश्चरगण में—
उडुगण, सुरगण त्रिभुवन में॥
शशि घबराए, रवि अकुलाए।
टूटे गिरि—तरु चरररररररर॥

—:०:—

इन्द्रादिक सब देवता–हो अत्यन्त उदास ।
आए करने प्रार्थना महावीर के पास ॥
"बजरङ्गबली हो जाउ शान्त, सुरगण सब विनय कर रहे हैं ।
प्राकृतिक खेल मिट जाएगा, इस कारण देव डर रहे हैं ॥
लङ्का को फूँको क्षार करो, कञ्चन के कोठे तोड़ो तुम ।
पर वीर, हमारे आग्रह से इस समय काल को छोड़ो तुम ॥"
छोड़ दिया हनुमान् ने अपने कर से काल ।
देख दशानन ओर फिर–गर्जे आँख निकाल ॥
इतने में लङ्का को देखा तो वह अत्यन्त चमकती थी ।
ज्वाला ज्यों बढ़ती जाती थी त्यों कञ्चन-ज्योति दमकती थी ॥
आँखों में खटका स्वर्ण तेज, सोचा परिणाम लपट का है ।
जा पहुँचे तभी सुरंगों में देखा कोई मुर्दा लटका है ॥
नीचे शिर, ऊपर पग उसके, सांकल से जकड़ी बाँहें थीं ।
फिर देखा मुर्दा ज़िन्दा है, धीमी धीमी कुछ आहें थीं ॥
कर मुक्त उसे बजरंगी ने–"भय तजो और हो शान्त"–कहा ।
तब सावधान होकर उसने अपना सारा वृत्तान्त कहा ॥
"धन्य आपको आपने जीवन किया प्रदान ।
नाम शनैश्चर दास का सुनिए दयानिधान ॥
मैं अपना फल बतलाने को दशमुख के सम्मुख आया था ।
'आगई साढ़साती तुझपर', यह मैंने उसे बताया था ॥
सुनते ही वह तो भवक उठा आँखों को मुझपर लाल किया ।
'पहले तू भोग साढ़साती'–यह कह बन्दी तत्काल किया ॥
अब तुमने जो उपकार किया उसका है प्रत्युपकार नहीं ।
कुछ सेवा लो आभारी से तो अधिक रहेगा भार नहीं ॥

यह सुनकर बोले महावीर "यदि सचमुच तुम्हीं शनैश्चर हो।
तो आओ थोड़ा काम करो, जिसका प्रभाव लङ्का पर हो॥
इस चमक दमक की नगरी पर, कुछ अपनी दृष्टि फिराओ तुम।
सचमुच है दशा तुम्हारी तो कञ्चन को लौह बनाओ तुम॥"

दृष्टि शनैश्चर की पड़ी छाया तिमिर अपार।
लङ्का काली पड़ गई, गर्जे पवनकुमार॥

यों उलट-पुलट पुर दहन किया मद चूर कर दिया रावण का।
सम्पूर्ण नगर को फूँक दिया घर छोड़ा एक विभीषण का॥
सोने की भस्म बनाकर यों कुछ-कुछ अलसाने लगे बली।
कूदे तत्काल समुद्र-मध्य, निज पूँछ बुझाने लगे बली॥

पूँछ बुझा श्रम दूरकर ले छोटा आकार।
पहुँचे माता के निकट फिर श्रीवायुकुमार॥

बोले-"अब चित्त उचटता है, अतएव विदा करिएगा माँ।
फिर हाथ कृपा का इस सर पर चलती बिरियाँ धरिएगा माँ॥
प्रभु ने जैसे मुँदरी दी थी, दें चिन्ह मात भी निज कर से।
सन्देश कहें जो कहना हो, कहदूँगा सब श्रीरघुवर से॥"

इन वचनों से मात को हुआ पूर्ण आह्लाद।
दिया पुत्र हनुमान् को आशीर्वाद-प्रसाद॥

बोलीं-"लो मेरा, चूड़ामणि; उनके चरणों में रख देना।
कर जोर ओर से मेरी फिर; इस भाँति निवेदन कर देना॥
कर्तव्य समझकर वे अपना मेरा सङ्कट-सम्वरण करें।
जो वाण जयन्ता पर छोड़ा वह कहाँ गया? फिर ग्रहण करें॥
यदि एक मास के भीतर ही प्रभु आकर नहीं छुड़ाएँगे।
तो कह देना जतला देना फिर मुझे न जीती पाएँगे॥"

बलवीर, उधर तुम जाते हो, क्या पता इधर क्या होना है।
सान्त्वना मिली थी कुछ तुमसे फिर वही रात दिन रोना है॥
पर क्या करिए, परवशता है! इस कारण धीर धर रही हूँ।
छाती पर पत्थर-सा रखकर मैं तुमको विदा कर रही हूँ॥"

ढाढस देकर शान्त कर समझाकर बहु बार।
विदा हुए आशीस ले—श्रीअञ्जनीकुमार॥

चलते चलते ऐसे गर्जे फट गए कान फिर असुरों के।
वह प्रलय मेघ-सा शब्द हुआ—गिर गए गर्भ निश्चरियों के॥
सुन अट्टहास का विकट शब्द—पृथ्वी, पहाड़ तक डोल उठे।
पहचान घोष बजरङ्गी का इस पार कीशगण बोल उठे—

गाना

"हनुमत् का आगमन है गगन काँप रहा है।
कपिराज की है गर्जना वन काँप रहा है॥
आकाश में पाताल में कैसी दहाड़ है।
वह घोर घोष है कि भुवन काँप रहा है॥
पहुँचा जहाँ पै शब्द यह छक्के छुड़ा दिए।
दिग्गज समेत नाग का फन काँप रहा है॥
मर्याद तजी सिन्धु ने गिरि डोल रहा है।
मुँह चूम झूम झूम पवन काँप रहा है॥
बजरङ्ग आरहे हैं—जयी होके 'राधेश्याम'।
यह वह हैं जिनके नाम से रन काँप रहा है॥"

—:०:—

हलचल यह अवलोक कर वानरदल था दङ्ग।
'जय राघव' कहते—उधर आते थे बजरङ्ग॥

इस पार जभी आए कपिवर कपिगण में हर्ष अपार हुआ।
सम्मान हुआ सत्कार हुआ, उपचार हुआ, जयकार हुआ॥

सब उन्हें घेरकर बैठ गए, उनकी लङ्गूल चूमते थे ।
सुन-सुनकर लङ्का-दहन कथा हो-होकर मग्न झूमते थे ॥
खा मधुवन के मधुर फल, करते हर्षोल्लास ।
'जय राघव' करते हुए आए सब प्रभु पास ॥
एक-एक से हृदय लग मिले मैथिलीकान्त ।
जामवन्त ने कर दिया वर्णन सब वृत्तान्त ॥
बोले—"हे नाथ, विजय पाई इन श्रीचरणों ही के बल से ।
फल आया है उस बिरवे में सींचा था जिसे कृपा-जल से ॥
सौ योजन का सागर लाँघा, वैरी के घर भी नाम किया ।
जीवन प्रदान कर हम सबको हनुमत् ने पूरा काम किया ॥"
जामवन्त की बात सुन-पुलके करुणागार ।
वीर अञ्जनीलाल से भेटे भुजा पसार ॥
"हे महाबली, हे महावीर, बल पर तेरे गर्वित हूँ मैं ।
इस कृति के बदले में क्या दूँ ? कुछ वस्तु नहीं लज्जित हूँ मैं ॥
हो सकता नहीं उऋण तुझसे, इस अवसर यही कहूँगा मैं ।
जबतक पृथ्वी-आकाश रहे, बस तेरा ऋणी रहूँगा मैं ॥
अब यह बतलाओ-वैदेही किस भाँति वहाँ पर रहती है ?
कैसे निज जीवन-रक्षा कर, अन्याय असुर का सहती है ?"
यह सुनकर हनुमान् ने कहा-जोड़कर हाथ—
"सीता माता की कथा करुण-कथा है नाथ ॥
सिंहिनी कठहरे में जैसे, या रसना जैसे दाँतों में ।
वैसे ही हैं वे सतवन्ती उन रजनीचर मदमातों में ॥
या जिस प्रकार हो फणि में मणि अथवा हो कमलपत्र जल में ।
ऐसे ही रहतीं मात वहाँ जिस भाँति चन्द्रिका बादल में ॥

चलने के समय कहा मुझसे—'सबमेरी व्यथा सुना देना ।
छोड़ा जो बाण जयन्ता पर, उसकी भी याद दिला देना ॥
अपराध हुआ है क्या मुझसे ? जो मुझे बिसारे बैठे हैं ।
वे प्रणतपाल कहलाकर क्यों अपना प्रण हारे बैठे हैं ?
दिन-रात काल के मुख में हूँ पर प्राण न हाय निकलते हैं ।
दर्शन के प्यासे नैना यह—जीवन को रोके रहते हैं ॥
सुधि नहीं महीनेभर में ली—रघुराई ने आकर मेरी—
तो तन तज आत्मा लोटेगी उन चरणों में जाकर मेरी' ॥
चूडामणि चलते समय दिया, स्वामी, यह चिन्ह लीजिएगा ।
दुखभरी कथा वैदेही की कब तलक कहाँ तक सुनिएगा ?"

यह सुनते ही अधिक फिर—विकल हुए रघुवीर ।
क्लेश हुआ अति चित्त को बहा दृगों से नीर ॥

बोले—"हा ! ऐसी पतिव्रता ऐसे सङ्कट के मुख में है !
जिसका मुझसा पति जीवित है वह पत्नी इतने दुख में है !!
हो कुश काथरी सेज उसकी ! महलों का जीवन जिसका है !
करनी का लिखा नहीं मिटता होनी में चारा किसका है ?"

हनुमत् बोले—"नाथ के हैं अति उच्च विचार ।
पर सेवक की भी विनय सुनें दयाभण्डार ॥

दुख उसको होता है जग में, जो इन चरणों की शरण न हो ।
है उसी ठौर दुख या सङ्कट जिस ठौर ईश्वर-स्मरण न हो ॥
माता को दुख-सङ्कट कैसा, ? निशदिन वे नाम सुमरती हैं ।
मन-मन्दिर में रघुराई हैं, साक्षात् उन्हीं का करती हैं ॥
है विरहज्वाल का कष्ट जहाँ अन्तश्छवि की नर्मी भी है ।
इस जग का है व्यवहार यही—सर्दी भी है गर्मी भी है ॥

दूसरे, बात कितनी सी है ? रण-भेरी बजने दें स्वामी ।
लङ्का पर धावा करने को कपि-सेना बढ़ने दें स्वामी ॥"
उठकर राघव ने कहा—"धन्य वीर हनुमान ।
तेरी गति-मति योग्यता हो किस भाँति बखान ?
तुझसा उपकारी और नहीं सुर, नर मुनि सकल चराचर में ।
बलवीर, हुआ तू अमृत नीर विरही-जीवन के तरुवर में ॥
अब और विशेष कहें हम क्या तू अब से प्राण हमारा है ।
श्रीभरत-शत्रुहन लक्ष्मण से सीता से बढ़कर प्यारा है ॥"
यह कहते-कहते पुलकित प्रभु-नयनों का नीर रोकते थे ।
टकटकी बाँधकर बार-बार हनुमत् की ओर देखते थे ॥
देख अवस्था नाथ की हनुमत् हुए अधीर ।
हूक मार चरणों गिरे कहकर जय रघुवीर ॥
थी दोनों ओर प्रेम-गंगा, कपिदल भी जिसमें न्हाता था ।
स्वामी सेवक का मिलन देख, त्रिभुवन-मण्डल पुलकाता था ॥
प्रभु लगे उठाने हनुमत् को, वे हिले नहीं उठना कैसा ?
चरणों में जब गड़ गया चित्त टलना कैसा हटना कैसा ?
शपथ दिला तब भक्त को खींच लिया निज ओर ।
आसन दे अपने निकट बोले अवधकिशोर ॥

❀ गाना ❀

"बजरङ्गी प्यारे, गुण पै तुहारे बलिहार मैं ।
'सुन कपि तोहि उऋण मैं नाहीं' ।
नाम किया उपकार में, क्या दूँगा उपहार मैं ?
'माँग माँग कपि वर अनुकूला ।'
तन मन सर्बस वार मैं, कर लूँगा स्वीकार मैं ॥"

—❀!—

इस प्रकार बोले वचन जब प्रभु करुणाऐन ।
उन्हीं स्वरों में कहे तब हनुमत् ने कुछ वैन ॥

❀ गाना ❀



"महाराज हमारे चरण तुम्हारे का हूँ दास मैं ?
'यह सब तव प्रताप रघुराई'।
पदरज का प्रतिश्वास मैं रखता हूँ विश्वास मैं।
'नाथ, भक्ति तव शिव मन-भावनि'।
माँग रहा सोल्लास मैं अनुचर हो रहूँ पास मैं ॥'

—: ० :—

'एवमस्तु' प्रभु ने कहा—जन-इच्छा अनुकूल ।
बजीं गगन में दुन्दुभी लगे बरसने फूल ॥
मित्रमण्डली में जभी पहुँचे पवनकुमार ।
लिपट-लिपटकर कीशगण भेंटे बारम्बार ॥
नल बोला—"सच बात तो यह है, हे हनुमान ।
दिया सभी सथियों को तुमने जीवनदान ॥
यदि लौट यहाँ आते हम सब सीता माँ की सुधि लिए बिना—
तो प्राणदण्ड देते सुकण्ठ, होते न शान्त यह किए बिना ॥
कारण वे प्रथम कह चुके थे, 'असफल होकर यदि आओगे—
तो पहले से कह रखता हूँ—सब दण्ड मृत्यु का पाओगे' ॥
इसी दृष्टि से फिर यही कहता हूँ हनुमान ।
दिया सभी साथियों को तुमने जीवन-दान ॥"
कहा नील ने—"हमीं पर किया नहीं उपकार ।
हैं सुकण्ठ भी मानते इनका यह आभार ॥
कपिपति को रघुपति से यदि यह अवसर पर नहीं मिला देते—
तो बालिराज कबका उनको सीधा यमलोक पठा देते ॥
इस कारण मैं यह कहता हूँ यह दुखी जनों के त्राता हैं ।
कपियों के जीवनदाता हैं कपिपति के जीवनदाता हैं ॥"